

वीर सप्तम् २४७४ -
विश्वम् सप्तम् २००५
ईस्वी सन् १९४८

प्रथम आवृत्ति
१००१

मूल्य
सात आना

मुद्रक
मानमल जैन "मार्चण्ड"
श्री वीरपुत्र प्रिन्टिंग प्रेस,
गोटालेन नयानाजार, अजमेर

जैन कन्या बोधिनी (तृतीय भाग)

का—

शुद्धिपत्र.—

| शुद्ध | अशुद्ध | पृष्ठ | पत्रि |
|-----------------|--------------------|-------|-------|
| होनायगे | होएंगे | ७ | १६ |
| गतों को | गतों मे | १२ | ६ |
| राजा ने स्वीकार | राजा न कहा स्वीकार | १५ | १६ |
| मेरी धान पर | मेरी पर वातर | १४ | १० |
| सामायिक एक | एक सामायिक | १६ | १५ |
| सामग्रियों | सामग्रियों | १८ | ८ |
| चतुर्विंशति | चतुर्विंशति | २० | ८ |
| सामायिक | सामयिक | २४ | १६ |
| अभिचारी | अधितारी | २४ | ४ |
| धष्ट | भष्ट | २५ | ८ |
| दुष्टेन हो | दुष्टत | २५ | १० |
| खास | इवाम | २५ | १५ |
| तब तक | जब तक | २६ | ३ |
| एक उपाय | एक उपाय था | २७ | १ |
| दलानी | मेरी दलाली | २८ | ४ |
| उपस्थित | उपास्थित | २७ | ११ |
| करन | करल | ४० | ५ |
| समझ मे | समझ | ४२ | ५ |
| अधा | अध | ४६ | २ |
| बध | बध | ४६ | १४ |
| बुध | बध | ४६ | १८ |
| बताइये | बताये | ४६ | १५ |

विः
ईर

कारण
मुँह
फिर खी
बहता
दो करना
सहस्रानिक
विसर्जित
यम
मंडूक
धृष्टता
सोही
नाम जा
लीची
जिका
पड़ियाँ
पुछ
उनकी सेवा
जाओ

का कारण
मुँह पर
फि खीर
बहना
दो देना
सहस्राविक
विसर्जत
, 'उद्र
सुअर
धेएता
सही
नाम ता
मीची
जिका जीका
पड़िया
हृष्ट
उनका सपन
जाया जाआ

सूचना

पृष्ठ २२ में दूसरी पंक्ति में नीचे यह पंक्ति हानी है
'अतक अहत् भगधती को नमस्कार कर नहीं पा

पृ ५० में पंक्ति १६ 'येव आयु का यध होता है

धर्म धावक धम एवे तपस्या की साधना करने म ।
स्थान में एसा पड़ना चाहिए '४—मुनिधर्म, धायक
एव तपस्या की साधना करने संकेत आयु का यध होमा

पृ ६७ पंक्ति १५—'छाटी स्थिति र हा ता

आगे पढ़ा स्थिति धाने खीर शिथिल र र घाने को
करता है' ऐसा पड़ना चाहिए ।

प्रकाशक के दो शब्द

दक दृष्ट !

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल के द्वारा स्वाध्याय माला पहला
अंश अर्थात् आपके सामने 'जैन कन्या बोधिनी' के दो
भाग से रचे जा चुके हैं। हमें प्रसन्नता है कि आज हम
गणकी सेवा में 'जैन कन्या बोधिनी' का तीसरा भाग भी
उत्पन्न हो रहा है।

इस पुस्तक का सम्पादन प० रत्नकुमारजी जैन 'रत्नेश' ने
किया था किन्तु सशोधन में त्रिलोकन नयासा ही परिवर्तन हो
चका फिर भी उसका परिश्रम है। भाषा के सशोधन में प०
सा० त्रिलोकजी अजमेर ने काफी परिश्रम उठाया है। पत्रद्वारा
उनकी धन्यवाद।

मंडल श्रीमज्जैनाचार्य पूज्य श्री हस्तीमलजी म० सा०
का विर करण है। आज तक जो साहित्य प्रकाशित हुआ है
उसमें आपकी देख रेख में संपादित हुआ है। अतः
इस अवसर पर हम हृत्प्रसन्नता प्रकट करणा अपना कर्तव्य
समझते हैं।

तासरे भाग के प्रकाशन में स्व० लड फतेमलजी के सुपुत्र
उदयमलजी लोढ़ा और सेठ बाहुमलजी लोढ़ा ने आर्थिक
सहायता प्रदर्शित की है पत्रद्वारा धन्यवाद। आशा है समाज के

अब धीमान् भी लोढ़ाजी का अनुकरण कर उरसाह बढ़ावेंगे तो हम समय २ पर विशेष मेधा कर सकेंगे ।

अतः मैं धी सरदारमलजी सा० लोढ़ा तथा प्रेस के सच्चे लक धी मानमलजी जैन को धन्यवाद देना आवश्यक मानते हैं जिनके सहयोग से पुस्तक का मुद्रण हो सका है ।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक
महल, जोधपुर
१ जुलाई १९४८

मन्त्री—
चम्पालाल कर्णारि
बी० ए० एल-एल० बी०

जैन कन्या-बोधिनी

तृतीय भाग

पाठ १

प्रार्थना

वह शक्ति हमें दो दयानिधे ।
कर्त्तव्य मार्ग पर डट जायें ।

पर संवा, पर उपकार में हम;
जग जीवन सफल बना जायें ।
हम दीन, दुखा, निबलों, विकलों,
के सेवक बन सन्ताप हों ।

जो हैं भूले मटरे अटके ।
उनको तारें खुद तर जायें ।

छल, द्वेष, कपट, पाखंड, मूठ,
अन्याय से निश दिन दूर रहें ।
जीवन हो शुद्ध, सरल अपना,
शुचि प्रेम-गुधा निव बरसायें ।

निज ज्ञान कान मर्यादा का ।
प्रभु ! ध्यान रहे, अभिमान रहे ।

जिम देश, जाति में जन्म लिया ।
बलिदान उमी पर हो जावे ।

- १—जीवन को उत्तम बनाने के लिये कौन २ से गुण
आवश्यक हैं ?
- २—हमें कौन ० से दुर्गुणों से दूर रहना चाहिये ?
- ३—किन बातों का हमें सदा ध्यान रखना चाहिये ?
- ४—प्राज्ञा के लाभ यथाश्रो ?
- ५—प्राज्ञा कथं कर सुनाया ?

पाठ २

नवकार मंत्र

[कुडुम् की ध्वनि]

नमस्कार हो अरिहतों को, राग—द्वेष—रिपू—महारी ।
नमस्कार हो श्रीसिद्धों को, अजर अमर नित अरिकारी ;
नमस्कार हो आचार्यों को, मध—गिरोमणि आचारी ।
नमस्कार हो उपज्ज्भार्यों को, अक्षय श्रुत निवि के धारी ।
नमस्कार हो साधु भक्ती को, जग म जग ममता मारी ।
त्याग दिए वैराग्य भाव से, भोग भाव मध ससारी ।
पाच पदों की नमस्कार यह, नष्ट कर कलिमल मारी ।
मगल-मूल अश्विल मगल में, पाप भीरु जनता तारी ।

—उपाध्यायः कवि श्रीभ्रमरचन्द्रजी

पाठ ३

वन्दन पाठ

तिस्सुतो का हिन्दी पद्यानुवाद

[लायनी की धनि]

तीन बार गुफ वर ! प्रदक्षिणा, आर्द्रविण में करता हूँ ।
वन्दन, नति, सत्कार और, सम्मान हृदय से करता हूँ ।
मंगलमय, रुन्याण रूप, देवत्व भाव के धारक हो ।
ज्ञान रूप हो प्रबल अग्निदा, अधकार सहारक हो ।
पर्युपासना श्री चरगों की, एक मात्र नीमन धन है, ।
हाथ जोड़कर शीश भुक्कार, बार बार अभिवन्दन है ।

—उपाध्याय कवि श्रीअमरधन्वजी

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ

पाठ ४

गहनो से हानियाँ

प्यारी रुन्याओं! तुम को मालूम होगा कि गहनो से क्या २ हानियाँ होती हैं । ये कमी २ बच्चों के लिये प्राणघातक भी बन जाते हैं ।

यह तो तुम अपने गाव में भी गुना करती होंगी कि कई -लड़कियों ने अपने गहने खो दिये, तो कई

लदकियों के गहने चोर चुरा कर भाग गये । इस तरह माल की हानि तो होनी ही है, लेकिन कभी २ इनके पीछे जान भी चली जाता है । कई दुष्ट लोग गहने पहने हुए छोटे २ लदके लदकियों को फुमनाकर एकान्त स्थान में ले जाते हैं और गहनों के खातिर उन्हें मार डालते हैं ।

एक समय की बात है कि एक सेठजी मन बहलाने के लिये अपने कुटुम्ब सहित एक बगीचे में गये । बगीचा गाँव से कुछ दूर एक पहाड़ के पास था । सेठजी के साथ एक पाँच साल का छोटा बालक भी था । जिसके गले में मोने की चैन और हाथों में कड़े थे । वह भी बगीचे में घूमने लगा और तरह २ के फूलों को देखने लगा । देखते २ वह सब की आँखों से ओझल हो गया । किसी को उसका ध्यान ही न रहा । फिर क्या था ? जो लोग इमी तारु में घूम रहे थे, उन्होंने बच्चे को परुड़ कर एक गहान के नीचे दबा दिया और उसके सब गहन उतार कर ले भागे । कुछ देर बाद जब सेठजी को यह पता चला तो उन्हें बहुत रज हुआ । वे बहुत पछताने लगे । लेकिन अब क्या हो सकता था ? बच्चा सदैव के लिये चल बसा था ।

सेठजी ने उसी दिन मे अपने पच्चा को गहन न पहनान की प्रतिज्ञा ले ली ।

देखो, गहनों से कैसे बुरे परिणाम हो जाते हैं । इमलिये प्यारी कन्याओ ! गहनों से अधिक मोह मत रकड़ो । समय पर पहना भी तो सावधानी रकड़ो । जिससे कि तुमको जान और माल का नुकमान नहीं उठाना पड़े ।

१—इस पाठ से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है ?

२—गहन पहनने में क्या हानियाँ ह ?

३—सेठजी के लडके को प्राण क्यों गए ?



पाठ ५

सेठ की बुद्धिमानी

बसतपुर के सेठ जिनटाम बडे बुद्धिमान थे । उनके कोई लडका नहा था । मेठ और सेठानी इसमे सदा चिन्तित रहा करते थे । एक दिन रात को उनके घर में चोर था घुसे । सेठजी को चिन्ता के मारे नींद नहीं आ रही थी । चोर को देख कर वे डर गये । लेकिन फिर उनके मन में विचार आया कि मेरे आवते हुए अगर

चोर माल चुरा ले जाएंगे तो दुनिया में मेरी हसी होगी । इसलिये अब कोई ऐसा उपाय करना चाहिये, जिसमें माल भी न जाय और चोर भी पकड़े जाय । यह मोच कर उन्होंने पाम में कोई हुड़ मठानी से रूहा—क्योंजी अगर कल तुम्हारे लडका हो जाय तो उसका क्या नाम रखोगी ?

मेठानी ने कहा—याह ! अभी निम बात की आशा ही नहीं, उसका नाम का क्या बात है ? जब बच्चा हो जायगा तो उसका नाम रखन में क्या देर लगेगी ? भूट से कोई नाम रख लगे ।

सेठजी न रूहा—अनी ! तुम तो माली की भोली ही रहा । मरा मतलय यह है कि नल्दी में नाम अच्छा नहीं रक्खा जाता । इसलिये अभी में साच लेना चाहिये ।

मेठानी न कहा—तो आप हा उताइय क्या नाम रखना जाय ।

मठनी बोले—मर रुपाल में तो अपने बड़े लडके का नाम काजी रखना अच्छा है ।

मेठानी बोली हा—बिबुल ठीक है । निनके बच्चे नहीं जीते हैं उनके यहां पहले ऐमे ही नाम दिये

जाते हैं । अच्छा, अब दूसरे का नाम भी कहिये, क्या रखेंगे ?

सेठनी बोले— मैं तो समझता हूँ उसका नाम मुल्ला रख दिया जाय । चोर भी चोरी करना भूल कर दोनों की बातें सुन रहे थे । वे मन ही मन यह सोच कर हस रहे थे कि दोनों कैम पागल हैं ? जहाँ एक की तो आशा ही नहीं वहाँ दूसरे का नाम रख रहे हैं ।

सेठानी मतलब समझ गई थी । उमन कहा—जी हाँ, कानी के साथ मुल्ला ही ठीक रहता है । अब तीसरे लड़के का नाम सोचना है ।

सेठनी ने कहा—उसका नाम चोर रख देंगे । क्यों ठीक है न ?

सेठानी बोली—बिन्दुल ठीक है । मुझे तो तीना नाम बहुत पसन्द आये है ।

सेठजी ने कहा—तब तो तुम्हारे तीन लड़के होएँगे । जब छोटा लड़का यहाँ बाहर चला जायगा तो तुम कानी और मुल्ला को पुकार कर उमे जुला सकोगी । लेकिन जब तीनों बाहर चले जाएँगे तो तुम उन्हें कैसे जुलाओगी ?

सेठानी ने कहा—कानी, मुल्ला, चोर ! घर आनाओ ।

सेठनी ने कहा—तुम्हारी आवाज तो बड़ी धीमी है । जब वे दूर चले जाएंगे तो ऐसी धीमी आवाज को थोड़े ही सुनेगे ? लो, मैं पुकारता हूँ । यह कह कर सेठनी ने जोर में पुकारा कानी मुज्जा चोर ! काजी मुज्जा चोर ! सेठनी की आवाज सुनते ही गांव में गरज लगाते हुए कोतवाल आगये । निन्हे लोग काजी कहते थे । चौकीदार मुज्जा भी आ गया । उसने पूछा चोर कहाँ हैं ?

सेठजी ने तुरन्त सोने में, छिपे हुए चोगों को परुड़ा दिया । चोर हम रह थे । काजी ने आरचर्य से पूछा—अरे ! तुम को हँसी क्यों आ रही है ? चोरों ने सारा हाल कह सुनाया । निसे मुन कर सानी और मुज्जा भी हँसने लगे और सेठनी की तारीफ करने लगे ।

प्यारी ज्ञान्याया ! जो कठिन समय में भी इस प्रकार हिम्मत रमता है और बुद्धिमानि से काम लेता है, उसकी दुनियाँ में तारीफ होती है ।

१—सेठजी ने क्या बुद्धिमानि की ?

२—चोरों ने क्या समझा ?

३—कानी कौन थे ?



अमद्य

अध्या०—सुमद्रा ! नहीं खाने योग्य पदार्थ, जिनको खाने से अधिक जारा की हिंसा होती हो तथा जिनके सेवन से मन में विकार उत्पन्न हो, उन्हें अमद्य कहते हैं ।

सुमद्रा—अमद्य पदार्थ कौन २ मे हैं ।

अध्या०—दुनिया में अमद्य पदार्थ कई तरह के हैं । लेकिन उनमें से कुछ का नाम तुम्हें बताती हूँ ।

बड़ के फल, पीपल के फल और गूलर के फल कमी नहीं खाने चाहिये । क्योंकि इन फलों में बहुत जीव होते हैं । आम और भट्टिरा की प्राप्ति भी असह्य जीवा की हिंसा से होती है । इनके सेवन से मनमें विकार उत्पन्न हो जाते हैं । अतः ये सर्वथा त्याज्य हैं । तुमने सुना होगा कि आनरुल बाजारों में तिलापती दवाइयें बहुत बिकती हैं । उनमें मदिरा-म्प्रीट चरबी आदि चीजों का मयाग रहता है । कई दवाइयें जानवरों की मारकर भी बनाई जाती हैं । जैसे कि मच्छियों का तैल आदि । ये सब अमद्य हैं । इनका उपयोग जीवन में जहां तक हो सके नहा करना चाहिये ।

सुमद्रा—लेकिन जब बीमारी हो जाय और दवा लेना जरूरी हो तब क्या करे ?

अध्या०—सुमद्रा ! कई ऐसी भी दवाइयाँ होती हैं, जिनमें इन चीजा का उपयोग नहीं किया जाता । और न जानवरों से ही घात की जाती है । हमारी देशी दवाइयाँ और होमियोपैथिक की औषधियाँ कुछ शुद्ध भी हैं । अतः बीमारी की हालत में भी वैसी शुद्ध मास्त्रिक दवाइयों का सेवन करना चाहिये या उपनामादि के लघन से बीमारियों को मिटाना चाहिये ।

ठंडी चामी रोटी निमरो तोड़ने पर लार निकलती हो, याने तात बघती हो अमक्ष्य है । बहुत दिनों की मिठाई भी अमक्ष्य हा जाती है । जब कि उम पर फूलन स्याजाती है और मिठाई के रस में खटास पैदा हो जाता है । इसी तरह मड़े गले फल और अनचाने पदार्थ भी अमक्ष्य समझने चाहिये ।

- १--अमक्ष्य किसे कहते हैं ?
- २--अमक्ष्य पदार्थ के कुछ नाम बताओ ।
- ३--औषधिया अमक्ष्य क्यों है ?

श्रावक

सुमद्रा—शान्ति, क्या तुम यता मरुती हो कि श्रावक किसे कहते हैं ?

शान्ति—जा श्रावक कुल में जन्म लेता है उसे श्रावक कहते हैं ।

सुमद्रा—श्रावक कुल में जन्म लेने में ही कोई सच्चा श्रावक नहीं कहा जा सकता । मरुचा श्रावक यानी सच्चा गृहस्थ वही कहला सकता है, जिसमें निम्न लिखित गुण हों ।

शान्ति—कौन २ में बहिन ?

सुमद्रा—मरुचे श्रावक को राति भोजन का त्याग करना चाहिये, क्योंकि रात में भोजन करने से रई जीवों की हिंसा होती है । रात में हमें दिखाई भी अच्छी तरह से नहीं देता । इसलिए राते समय कई जीव हमारे पेट में चले जाते हैं । जिससे रई तरह के रोग पैदा हो जाते हैं । जीव अगर जहरीला हुआ तो उससे कभी २ मृत्यु भी हो जाती है ।

शान्ति—बहिन, अगर बिजली की तेज रोशनी में भोजन किया जाय तो क्या हानि है ।

सुमद्रा—तुमने देखा होगा कि रोशनी के पास जीव ज्यादा आते हैं । हममे तो और अधिक हिंसा होने की सभावना रहती है । रात को चूल्हा जलाने समय कई जस जीवों को जान बूझकर घात हो जाती है । भोजन भी ठीक तरह से इनम नर्दा हो पाता । इसलिये श्रावक को धार्मिक दृष्टि से ही नहीं स्वास्थ्य की दृष्टि से भी रात्रि भोजन का अग्रय त्याग करना चाहिये ।

दूसरी बात श्रावक क लिये यह है कि उसे पानी छान कर पीना चाहिये । क्योंकि यह बात तुम जान गई हो कि पानी में कई छोटे बड़े जीव होते हैं जो श्रावकों से भी दिखाने पडते हैं । उनके पेट में चले जाने से कई धीमारियां लड़ी हो जाती हैं । हजा और नेहरू जैसे भयकर रोग अनजाना पानी पीने से ही होते हैं । इसलिए श्रावक को दया पालने के लिए व शरीर को नीरो रखने के लिये मदा पानी छानकर ही पीना चाहिये । इन दो बातों के साथ नीति दयालुता और विश्वास पालन का तो सदा ध्यान रखना ही चाहिये, लेकिन कुथ और गुण भी हैं, चिनका पानन करने से गृहस्थ सच्चा श्रावक रहला मकता है ।

शान्ति—वे कौन से गुण हैं वहिन ?

सुमद्रा—१ धम पर दृढश्रद्धा २ जूझा, चोरी, मांस
श्रीर मदिरा आदि दुर्ब्यमनों का त्याग ३ सत्य ४ सतोष
५ सदाचार आदि

शान्ति—अगर तुम सची श्राविका बनना चाहती
हो तो तुम्हें भी इन बातों से अपने जीवन में उतारना
होगा । तभी तुम सचा श्राविका कहला सकोगी ।

१—धावक किसे कहते हैं ।

२—धाविका में कितने गुण होने चाहिये ।

३—रात्रि भोजन से क्या हानि है ?



पाठ ८

तीन पुतलियां

किसी गाव में एक कारीगर रहता था । वह खिलौने
बनाने में बड़ा चतुर था । एक दिन उसने तीन पुतलियां
बनाईं । जो रंग, रूप और लम्बाई, चौड़ाई में एक
समान थी । उन पुतलियों को लेकर वह राज समा में
गया और उनकी राजा के सम्मुख रख कर नीचे बैठ

गया। राजा ने कारीगर से पूछा उन पुतलियों की क्या
 किम्मत है ? कारीगर ने उत्तर दिया, हुजूर ! किम्मत
 ठहरान के लिये ही मैं इनको आपकी मेरा म लाया हूँ।
 अब आपही इनका परीक्षा कराएँ और किम्की कितनी
 किम्मत है, फरमाएँ। राजा न कहा तथा तीनों की
 किम्मत कम ज्यादा है। कारीगर न कहा हुजूर ! यह
 तो आप ही देख कर फरमाएँगे। राजा ने उन पुतलियों
 को अच्छी तरह से देखकर अपने राज दरबारियों से
 पूछा क्यों भाई ! आप लोगों की क्या राय है। राज
 दरबारियों ने कहा महाराज ! इनको ता तीनों पुतलिया
 समान नजर आती है, इसलिए इनकी किम्मत भी
 समान ही होनी चाहिये। राजा न अपने मन्त्री से कहा,
 मन्त्रीजी ! अब तुम्हारी परीक्षा है। कहा, तुम्हारी क्या
 राय है। मन्त्री ने कहा-महाराज ! अगर आप मुझे
 अफाग दें ता फल म इनको देखकर जराय दूगा।
 राजा ने कहा-स्वीकार किया। और कारीगर को फल
 आने के लिये कहा।

दूसरे दिन सुबह होते ही मय लाग राज दरबार में
 जमा हो गय। कारीगर और मन्त्री भी आ पहुँच।
 राजा ने आत ही मन्त्री से पूछा मन्त्रीजी ! क्या पुत-
 लियों की परीक्षा करली। कहे क्या निर्णय किया है।

मन्त्री ने उत्तर दिया, महाराज ! ये तीनों पुतलियाँ अपनी अलग २ विशेषता रखती हैं। मैंने तीनों पर नम्बर लगा दिए हैं। तदनुसार प्रथम नम्बर की पुतली सब से उत्तम है, क्योंकि उसके कान में भरी हुई फूक (हवा) भी बाहर नहीं निकलती है। दूसरे नम्बर की पुतली तुच्छ है, क्योंकि उसके कान की हवा मुठ से निकल जाती है। तीसरी तो बिल्कुल निष्प्रभा है, क्योंकि उसके कान की हवा एक कान से दूसरे कान में ही रह निकल जाती है। यदि आपकी शका हो तो एक तार लेकर डाक कान में डालिए, आपकी मेड़ी पर वा तर विश्राम हो जायगा। राजा ने वैसा ही किया। मन्त्री की बात सच निकली। राजा बहुत खुश हुआ। उसने कारीगर को सवा लाख रुपये इनाम दिए। सब लोग भी कारीगर की प्रशंसा करने लगे। राजा ने उन पुतलियाँ भी दिखाते हुए अपने राज-दरबारियों से कहा-दखा, पहले नम्बर की पुतली सवा लाख रुपये की है। यह बताती है कि जो मनुष्य सुनकर किसी बात को हृदय में रखता है, वह सग लाख का है। दूसरी पुतली कहती है कि जो मंत्री तरह कान में सुनकर मुह से निकाल देता है, उसको सिम्मत एक कौंधी की रह जाती है। तीसरी पुतली यह बताती है कि जो एक कान से सुन-

कर दूसरे कान से निकाल देता है वड़ मेगी तरह फूटी
 कौड़ी का है। उसकी दुनिया में कोई किम्मत नहीं
 होती है। जो मनुष्य प्रथम पुतलो के समान होता है,
 वही दुनिया में आदर सन्मान प्राप्त है। इसलिए प्यारी
 कन्याओं ! तुम भी अगर सुनी हुई शिक्षाओं को मनमें
 धारण करोगी तो समाज में तुम्हारा आदर होगा।

- १—मन्त्री ने क्या परीक्षा की ?
- २—राजा ने क्या कहा ?
- ३—तीसरी पुतली कैसी ?

१९५०

पाठ ६

सामायिक और उपाकी महिमा

कन्याओं ! क्या तुम सामायिक का स्वरूप और
 उसकी उपयोगिता जानती हो ? । द नहीं तो लो आज
 के पाठ में यही समझाये देती हूँ। यह सामायिक सबसे
 उच्च धार्मिक क्रिया है। आत्मा के अन्तर्गत जीवों के लिये
 समभाव को जागृत करना और उन्हें ही सामायिक
 का अर्थ है। कम से कम १ घण्टा का समय सामायिक

के लिये जरूरी माना गया है।

यदि तो तुम जानती हो कि ससोर के प्रपंच में बंधर गृहस्थी के कामों में जुटे रहने से मन का शान्ति नहीं मिल पाती। इसलिये मानसिक शान्ति और आत्म कल्याण के लिये थोड़ा समय निकालना जरूरी हो जाता है, निमसे कि दिल को शान्ति मिल सके। सच्ची शान्ति सामायिक करने से ही मिल सकती है, क्योंकि सामायिक में मन, वचन और काया को पूरी तरह से अशान्त वातावरण में दूर रहने का मौका मिलता है।

सामायिक की महिमा अपार है। तुम जानती होगी कि आज ऋतु बहुत से भाई बहिन सामायिक का महत्व न समझ कर केवल नाम की सामायिक करके इधर उधर की गप्पें मारने लग जाते हैं किन्तु ऐसा करने से उन्हें सामायिक में दोष लगता है। सामायिक में धर्म चर्चा के मियाय किसी तरह का पात गढा करनी चाहिये। इन समय तक मन का एक दम स्थिर रखना प्रारम्भ में मुश्किल मालूम होता है लेकिन अभ्यास करते २ फिर यह आसान बन जाता है। मन को शान्त रखने के लिये माला द्वारा प्रभु का स्मरण करना बड़ा अच्छा साधन है। जब तुम माला पेट चुको

या माला से मन अस्थिर होने लगे तो फीरन प्रभु मजन या भावना मय स्तवन प्रारम्भ कर दो । इसमें आत्मा में तल्लीनता पैदा होगी । इसके बाद अपने सीखे हुये ज्ञान का मनन आरम्भ कर दो । जिसमें तुम अपने पुराने ज्ञान का ताजा रख सकोगी । फिर कुछ समय अवशेष रहे तो किसी नयीन धार्मिक पुस्तक या स्वाध्याय करो । इसमें तुम्हारी ज्ञान वृद्धि हो सकेगी । इस प्रकार, सम-भार बढ़ाने वाली सामाजिकों में मुहूर्त भरतक माधना करना सामायिक है ।

इमलिये प्यारी रन्याओ ! यदि तुम श्रायिका कह-लाना चाहती हा तो सामायिक करना मत भूलो । इससे तुम्हारा जीवन पवित्र होगा ।

- १—सामायिक किसे कहते हैं ?
- २—सामायिक में क्या करना चाहिये ?
- ३—सामायिक करन से क्या लाभ है ?



पाठ १०

प्रतिक्रमण

सामायिक की तरह प्रतिक्रमण भी आत्म शुद्धि का एक मुख्य अंग है । प्रतिक्रमण के द्वारा आत्मा को

अशुभ मार्गों से हटा कर शुभ मार्गों की तरफ ले जाया जाता है। जान बूझ कर या अनजान में 'अपन द्वारा' किये गये पापों की आलोचना करना और फिर से नहीं करने की प्रतिज्ञा करना प्रतिक्रमण कहलाता है। प्रति क्रमण शब्द का छाटा या अर्थ पीछे इटनना भी होता है अर्थात् अपन पाप कर्मों में पीछे इटन को प्रतिक्रमण कहते हैं। प्रतिक्रमण दो चार किया जाता है। एक सुबह और एक शाम। सुबह जो प्रतिक्रमण किया जाता है, उसे राइसी यानी रात्रि सवधी-प्रतिक्रमण कहते हैं और जो शाम को सूर्यास्त के बाद किया जाता है उसे 'दिवसी प्रतिक्रमण' यानी दिन सवधी प्रतिक्रमण कहते हैं। सुबह के प्रतिक्रमण में रात के पापों की आलोचना की जाती है और शाम के प्रतिक्रमण में दिन के पापों की।

प्रतिक्रमण के दो भेद होते हैं। एक द्रव्य प्रतिक्रमण और दूसरा भाव प्रतिक्रमण। अपने दोषों की पाठों में शब्द रूप आलोचना कर लेना और दोष शुद्धि का कुछ भी विचार नहीं करना द्रव्य प्रतिक्रमण कहलाता है। इससे आत्मा की शुद्धि नहीं होती किन्तु आत्म वचना होती है। जैसे कुम्हार के बरतनों को चार-प्यार ककरों द्वारा फोड़ कर माफ़ी माँगना व्यर्थ है, वैसे

ही यह द्रव्य प्रतिक्रमण भी-भाव-प्रतिक्रमण के बिना सारही होता है । प्रतिक्रमण में अपन दैनिक दोषों की आलोचना करना और फिर उन दोषों का द्वारा मेवन नडा हो इसके लिये पूण सचेत रहना भाव प्रतिक्रमण कहलाता है ।

दोनों मध्या अवश्य करन योग्य होने में प्रतिक्रमण को अप्रश्यक भी कहते हैं । इसका ६ प्रकार है जो सामायिक, सुतुर्विंशति स्तव, वन्दना, प्रतिक्रमण, काउ-सम्भ (ध्यान) और पञ्चकखाण के नाम से कहे जाते हैं । इस तरह प्रति दिन शुद्ध भाव से जो इन छहों आवश्यकों की आराधना करता है वह पाप मार से हलका होकर शीघ्र ही ससार सागर को पार कर लेता है । इसके आचरण से कोई भी आत्मा अपने आपको निर्मल बना सकती है । इसलिये प्यारी कन्याओ ! अगर तुम अभी से प्रतिक्रमण करने की आदत डालोगी तो तुम्हारी आत्मा भी निर्मल होकर महान् मन सकेगी और तुम्हें आगे जाकर पढी शान्ति मिलेगी ।

- १—प्रतिक्रमण किसे कहते हैं ?
 २—वह कितने प्रकार का है ?
 ३—प्रतिक्रमण में कितने आयुष्य है ?

सच्ची-श्रद्धा

आज नाग देवता है माई ! चलो मामी से नाग देवता की पूजा करने की बहें । सुशीला ने अपने माई महावीर से कहा ।

महावीर ने कहा—हा, हा बहिन, कल ब्राह्मण कह तो गया था । चलो, मामी पूजा कर रही होगी । दोनों माई बहिन दौड़कर मामी के पाम पहुँचे । गामी रोज का काम कर रही थी । सुशीला ने कहा—मामी ! क्या इस साल नाग देवता की पूजा नहीं होगी । गत साल तो पिताजी घर पर ही थे, उन्होंने उड़े ठाठ चाट में नाग देवता की पूजा की थी । लेकिन आज वे घर पर नहीं हैं तो तुम क्यों नहीं करती ?

मामी विधवा थी । उसे न धन की चाह थी न लड़के लड़की की । अब वह भूटे देवी देवताओं की भाया में फसने वाली नहीं थी । उसे तो अपने गीतराग भगवान पर ही श्रद्धा थी । उसने सुशीला से कहा—सुशीला ! मैं तो अपने हाथ से रिमी की पूजा करती

नहीं हैं। जा, तूरी अम्मा से कहना। अगर वह चाहे तो पूजा करले।

सुशीला ने कहा—नहा, अम्मा कैसे कर मरती है; मामी ? घर में जो बड़ हात है, वही पूजा किया करते हैं। इसलिये तुम्हें ही करना होगी। लेकिन मामी ने पूजा नहीं की। सुशीला बड़-बड़ कर थर गई परन्तु सुशीला और महाशेर का इच्छा पूरी नही हुई।

दिन चल गया। सुशीला और महाशेर अपनी-अपनी काम के पास उदास बैठे हुए थे। मामी घर में इधर-उधर फिरकर अपना काम कर रही थीं। महमा एक-एक काला नाग घर में आया और उसने मामी को काट खाया। मामी गिर पड़ी। सुशीला और महाशेर दौड़कर अपने-अपने घरों को बुला लाये। सब कहने लगे—देखा, नाग पचमी के दिन पूजा नहीं करने का यह फल होता है। अब घबराना न घबराता माया की बात है लेकिन भाड़ा देने वाले को तो बुला लोभो। यह सुनकर मामी ने कहा—मा ! मैं मर भी जाऊँ तो कोई चिन्ता की बात नहीं है, किन्तु किमा विधवा दासू माँस खाने वाला का भाड़ा दिला कर मरा घम नहीं बिगाड़ना। नही तो मैं तुमका अपना हितैषी नहीं दुरमन समझूँगी। अगर

तुम मेरा भला चाहते हो तो मुझे वीतराग देव के नाम सुनाते रहो । यही मेरे लिये बड़ा शरण है । मामी की बात सुनकर लोग, जैसे आये थे वैस चले गये । सब ने मामी को मूर्ख समझा । किसी को उसके बचने की उम्मीद न रही । लेकिन मामी ने ३ दिन के लिये अन्न जल का त्याग कर नवकार मन्त्र और भक्तामर का पाठ सुनना प्रारम्भ किया । लोगों का आना जाना बराबर बना रहा । मामी तीन दिन तक नवकार मन्त्र का श्रवण करती रही । चौथे दिन मामी बिल्कुल स्वस्थ हो गई । साप का जहर दूर हो गया । लोगों ने अपने मुँह में अगुली दबाते हुए कहा—मामी का अपने सन्ने देव पर दृढ़ विश्वास है । इसलिये डमका जान रह गई । नहीं तो मर गई होती । सुशीला और महावीर के घर में फिर कमी नाग पंचमी की पूजा नहीं हुई । वे भी अपनी मामी की तरह अपने धम पर दृढ़ श्रद्धा वाले बन गये ।

प्यारी कन्याओ ! आज कल बहुत सी अनजान स्त्रियाँ इस तरह भैरु मरानी की पूजा किया करती हैं । वे समझती हैं, कि पूजा नहीं करेंगी तो कही देवी-देवता हमारा अनिष्ट कर देंगे । तुमने अभी जो यह कहानी पढ़ी है, यह एक घटी हुई सच्ची घटना है ।

लोगों ने समझ लिया था कि नाग-पयसी के दिन पूजा नहीं करने में ही मामी को नाग देवता ने काटा है और अपना परचा दिया है। लेकिन मामी अपने धर्म पर दृढ़ थी। वह जानती थी कि वीतराग परमात्मा का आश्रय ले लेने के बाद ममार के मिथ्या देवी-देवता किसी का कुछ नहीं बिगाड़ सकते हैं। उसे अपने इष्ट पर सच्ची श्रद्धा थी। इसलिए उसका पाल भी बाका नहीं हो सका।

प्यारी कन्याओं ! अगर तुम भी इसी तरह अपने वीतराग देव पर विश्राम रखोगी तो तुम्हारा भी कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

१—मामी ने पूजा क्यों नहीं की ?

२—साप का जहर कैसे उतरा ?

३—इस पाठ से क्या शिक्षा मिलती है ?

पाठ १२

सामयिक सूत्र

ईर्यापथिक दोष शुद्धि

हे भगवन् ! मैं पथ सप्रथी दोषों से दृढता चाहता।
ही आज्ञा गुरुराज। हर्ष से शोधन अब उनका करता ॥

जीव जन्तु हरितादि वनस्पति मिट्टी और सचित वारी ।
 कीड़ी नगरा काई ग्रस थावर हुआ प्राणी को दुखकारी ॥
 एकेन्द्रिय दो तीन चार या पचेन्द्रिय के जो धारी ।
 बाल बृद्ध दुर्बल मानर पशु पक्षी को यदि अविहारी ॥
 सम्मुख आते हनन किया या घूल आदि से दया दिया ।
 पृथ्वी पर मसला या सब का, पुरी तरह सघात किया ॥
 सघट्टन, परिताप ग्राम या, जीवन नाशक दुख दिया ।
 स्थान भृष्ट किया उनको या जीवन घन से दूर किया ॥
 ये सब जीव मात्र को दुख कर किया हुई जो ज्ञाताज्ञात ।
 मन, वच, काय नत्र दो चाह, निष्कल दुष्कृत मम तात ॥



कायोत्सर्ग की प्रतिज्ञा

आलोचित पातरु के शोधन, हित में कायोत्सर्ग करूँ ।
 शन्य हटा कर पाप-कर्म नाशन हित कायोत्सर्ग करूँ ॥
 श्वासोच्छ्वास स्वाम या द्विकर, जमाईर का आजाना ।
 अधो वायु डककार भवरि या पित्त से मूर्च्छित हो जाना ॥
 सूक्ष्म रूप से अग मचालन स्वामात्रिक जो होता है ।
 वैसे मुख में सूक्ष्म रूप से खेल ॥ चलाचल करता है ॥
 अस्थिर शारीरिक चल से, पलकों का गिरना या हिलना ।
 इत्यादिक कारण से तन में सूक्ष्म क्रिया का हो जाना ॥

अथवा पराधीन तन हान से जो देह क्रिया होती ।
इन सब के आभार सहित मम भग नहीं होवे वृत्ति ॥
जब तक कायोत्पर्ग अग्रधित स्थिर तनु मन बाणी धरुँ ।
देहासक्ति छोड़ के समरम आत्म रमणता प्राप्त करुँ ॥
बोतराग निर्दोष महात्माओं का मन मे घ्यान धरुँ ।

ॐ ० ॐ

पाठ १३

सामायिक का मूल्य

एक समय मगध सम्राट् श्रेणिक न श्रमण भगवान् महावीर मे अपने श्रगने जन्म की वास्तु पूछा कि 'मै मर कर कहा जाऊँगा ?' भगवान् ने कहा—'पहली नरक में ।' श्रेणिक ने कहा—'आपका भक्त और नरक में ? आश्चर्य है ! भगवान् ने कहा—'राजन् ! किये हुए कर्मों का फल तो भोगना ही पडता है, इसमें आश्चर्य क्या ?' राजा श्रेणिक ने बड़े ही आग्रह से नरक से बचने का उपाय पूछा तो भगवान् ने चार उपाय बताए । जिनमें से किसी एक भी उपाय का अवलम्बन करने से

नरक से बचा जा सकता था । उसमें एक उपाय था—उस समय के सुप्रसिद्ध साधक पूनिया श्रावक की सामायिक को खरीदना भी था ।

चारों उपायों में पूनिया श्रावक की सामायिक का खरीदना ही सब में सुलभ उपाय समझ महाराजा श्रेणिक पूनिया के पास पहुँचे और बोले कि, 'सेठ तुम मुझ से इन्ड्रानुमार धन ले लो और उसके बदले में मुझे अपनी एक सामायिक दे दी, मैं नरक में बच जाऊँगा ।' राजा को उक्त कथन के उत्तर में पूनिया श्रावक ने कहा—कि, 'महाराज ! मैं नहीं जानता, सामायिक का क्या मूल्य है ? अतएव जिन्होंने, आपको मेरी सामायिक, लेना बताया है, आप उन्हीं से सामायिक का मूल्य भी जान लीजिए ।'

राजा श्रेणिक फिर भगवान महावीर की सेवा में उपस्थित हुआ और भगवान के चरणों में निवेदन किया कि—'भगवान् ! पूनिया श्रावक के पास मैं गया था । वह सामायिक देने को तैयार है, परन्तु उसे पता नहीं कि सामायिक का क्या मूल्य है ? अतः भगवान् ! आप कृपा करके सामायिक का मूल्य बता दीजिए ।' भगवान् ने कहा—'राजन् ! तुम्हारे पास क्या इतना'

सोना और जवाहरात है कि जिसको थैलियों का ढेर घर्य और नाँद के तख्ते को छू जाय ? उम्हना करा कि इतना धन तुम्हारे पाम हो तो भी वह सामायिक की बेसी दलाली के लिए भी पूर्ण नहीं होगा । फिर सामायिक का मूल्य तो इहाँ से दोगे ?' भगवान का यह कथन सुन कर राजा श्रेणिक चुप हो गया ।

उपरोक्त घटना बता रही है कि सामायिक का एक मात्र मूल्य मोक्ष है, मोक्ष के अतिरिक्त कुछ नहीं । इसके वास्तविक फल के सामने समार की सभी भीतक सपदायें तुच्छ हैं । भले वे कितनी ही और किसी भी अच्छी क्यों न हों । इसलिए कन्याओं ! तुम्हें भी सामायिक का सच्चा मूल्य समझ कर शुद्ध भाव से इसके आराधन करना चाहिये ।

१—श्रेणिक को नरक से बचने का क्या उपाय बताया गया था ?

२—सामायिक का वास्तविक मूल्य क्या है ?

मेरी भावना

१

जिसने राग द्वेष कामादिक जीते, मय जग जान लिया ।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया ।
सुद्वार, जिन हरि, हर, प्रला, या उसको स्वाधीन फहो ।
मक्ति भाव से प्ररित हो यह, चित्त उसी में लीन रहो ।

२

विषयों की आशा नहीं जिनको, साम्यमात्र धन रखते हैं ।
निज पर के हित साधन म जो, निश दिन तत्पर रहते हैं ।
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं ।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुख समूह को हरते हैं ।

३

रहे सदा सत्सग उन्हीं का, ध्यान उन्ही का नित्य रहे ।
उनही जैसी चर्चा में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे ।
नही सताऊ किसी जीव को, भूठ कभी नहीं कदा करू ।
बने जहाँ तक इस जीवन में, धीरों का उपकार करू ।

४

मैत्री मात्र जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे ।
दीन दुखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा स्रोत बहे ।

दुर्जन क्रूर कुमार्ग-रतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे ।
साम्यभाव रगू में उन पर, ऐसी परिणति हो जावे ।

६

गुणां जनो की देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे ।
बने चहाँ तक उनकी सेवा, करके यद मन सुख पावे ।
होऊ नहीं, कृपण कभी म, द्राह न मेर उर आवे ।
शुण्य ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ।

कठिन शब्दार्थ—निष्पृह=वृष्णा रहित

वेरित हो=प्रेरणा पाकर

अनुरक्त=लगाहुआ, तत्पर

कल्याण=दया, क्रूर=निष्ठुर, पापी

क्षोभ=दुःख, घृणा, द्रोह=घट्टना

जिन=राग द्वेष की जीतने वाले

तत्पर=उद्यत, सैवार, द्योत=करना

कुमार्ग-रत=खराब मार्ग पर चलने वाले

वृत्त-न=उपकार को भूलने वाला

उर=हृदय

पुण्य-पाप

कमला—विमला ! क्या तुम पता सफ़ती हो कि पुण्य और पाप किये कहते हैं ।

विमला जिस काम को करने से प्राणी भविष्य में सुख पाता है और जगत में भी प्रशंसा प्राप्त करता है उसको पुण्य कर्म कहते हैं और जिसके करने से जगत में अपयश फैलता है तथा भविष्य में भी दुःख उठाना पड़ता है उसको पाप कर्म कहते हैं ।

कमला—ठीक है विमला, लेकिन क्या तुम यह भी जानती हो कि पुण्य कितनी तरह से बंधता है ?

विमला—यह तो मैं नहीं जानती बहिन ! आप ही बताइये ।

कमला—पुण्य कर्म का रन्ध्र नीं प्रसार में किया जाता है ।

जैसे कि —

१ अन्नपुण्य— खान के लिये अन्न देना ।

२ पान पुण्य— पीने के लिये पानी देना ।

- ३ लयनपुण्य— रहन के लिये स्थान देना ।
- ४ शयनपुण्य— मोने, बैठने के लिये शय्या देना ।
- ५ वस्त्रपुण्य— पहिने के लिये वस्त्र देना ।
- ६ मनपुण्य— मन से शुभ विचार करना ।
- ७ वचनपुण्य— मधुर और शुभ वाणी बोलना ।
- ८ कायपुण्य— शरीर से शुभ कर्म करना ।
- ९ नमस्कार पुण्य— आदरणीय पुरुषों का नमस्कार करना ।

विमला—पहिन ! पाप बधने के कौन २ से कारण हैं कि जिनमे जीव हम लोक और पर लोक में दुख पाता है ?

कमला—पहिन ! जीव १८ प्रकार के कारणों से पाप-कर्म पावता है । वे हम प्रकार हैं —

- १ प्राणातिपात— जीव हिंसा करना
- २ मृपावाद— झूठ बोलना
- ३ अदत्तादान— चोरी करना
- ४ मैथुन— विषय वासना करना
- ५ परिग्रह— धनधान्य आदि का अधिक संग्रह करना
- ६ क्रोध— गुस्सा करना ७ मान— घमंड करना

- ८ माया—रूपट करना ९ लोम—लालच करना
 १० राग—प्रेम करना ११ द्वेष—शत्रुता रखना
 १२ क्लह—क्लेश करना
 १३ अभ्यारपण—दूसरों पर झूठे दोष लगाना
 १४ पैशुन्य—दूसरों की चुगली करना
 १५ पर परिवाद—दूसरों की निंदा करना
 १६ रति अरति—किसी वस्तु को देखकर प्रमत्त
 होना और किसी को देखकर नाराज होना
 १७ माया मोमा—कपट सहित झूठ बोलना
 १८ मिथ्या दर्शनशून्य—निनेरर भगवान के मार्ग
 के सिवाय अन्य मिथ्या धर्म में श्रद्धा रखना ।

इस प्रकार जीवन का उत्तम बनाने के लिये इन १८
 पाप स्थानों में दूर होना चाहिये और उपरोक्त ६ प्रकार
 के पुण्य कार्यों को ग्रहण करना चाहिये ।

१—पुण्य किसे कहते हैं ?

२—वे कितनी तरह से बाध जाते हैं ?

३—पाप का बाध कितनी तरह से होता है ? नाम
 बताओ ।

४—निम्न लिखित के अर्थ बताओ —

पाप पुण्य, मायातिपात, अभ्याख्या, पैशुन्य,
 मिथ्या दर्शन शून्य ।

साधुजी के पांच महाव्रत

व्रतों में जो बड़े होते हैं, उन्हें महाव्रत कहते हैं। आत्मक अपने व्रतों का एक देश में पालन करता है, पर साधुओं को अपने महाव्रतों का पूर्ण रूप में पालन करना पड़ता है। उनके महाव्रत पांच बताये गये हैं। जो इस प्रकार हैं—

- १ सर्वथा हिंसा का त्याग करना—सन, वचन और काया से एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक किसी भी प्राणी को नहीं सताना।
- २ सर्वथा भ्रूट का त्याग करना—मरणान्त कष्ट आने पर भी सत्य को नहीं छानना।
- ३ सर्वथा चोरी का त्याग करना—किसी भी चीज को बिना आज्ञा नहीं उठाना।
- ४ सर्वथा मैथुन का त्याग करना—किसी भी प्रकार का मैथुन सेवन नहीं करना। पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना।
- ५ सर्वथा परिग्रह का त्याग करना—किसी भी वस्तु पर ममत्त्व नहीं रखना। जीवन निर्वाह व मयम

१. पालन की अत्यावश्यक चीजों के सिवाय किसी भी वस्तु का अपने पास मग्न नहा करना । साधु के प्रत्येक व्रत त्रिकरण त्रियोग में होता है ।

१—महाप्रत किसे कहते हैं ?

२—वे जितने हैं ? उक्त नाम सर्व पूर्वक यथाश्री ।

ॐ . ॐ

पाठ १८

बड़ी कौन ?

एक बार दया और लक्ष्मी में झगड़ा हो गया । दया ने कहा—मैं जीवा को तुमसे अधिक प्यार करती हूँ । लक्ष्मी ने कहा—नहा, मैं ज्यादा प्यार करती हूँ । न लक्ष्मी हार मानने का तैयार थी, न दया । अखिर दोनों अपना नियम कराने के लिये देवलाक के राजा इन्द्र के पास पहुँची ।

दोनों की बातें सुनकर इन्द्र ने कहा—तुम दोनों दुनिया में जाकर रहो । वहाँ आकर मैं तुम्हारी परीक्षा लूँगा ।

इन्द्र की आज्ञा पाकर दोनों स्वर्ग लोक से उतर कर पृथ्वी पर आ गईं । यह तो तुम जानती हो कि लक्ष्मी को धन मीन्दर्य बहुत प्यारा है और दया गरीबों के यहाँ ज्यादा मिलती है । इसलिए लक्ष्मी एक मेठ के घर में गई और दया एक गरीब किसान के घर में ।

कुछ दिन बाद एक गरीब मिखारी उन मेठजी के दरवाजे पर भीख मागने आया और बोला—माता, कुछ खाने को दूँ मैं बहुत भूखा हूँ । मेठानी ने कहा—जाओ, यहाँ कुछ नहीं मिलगा । बूढ़े ने फिर गिड़-गिड़ाकर कहा—मा, एक रोटी द दो, कई दिनों से कुछ खाया नहीं है । भगवान तुम्हारा भला करेंगे । लेकिन मेठानी को इस पर भी दया नहीं आई । वह गरज कर बोली—अरे जोई है ई निकाला हम बूढ़े को । यहाँ आकर टर टर करता है ।

बूढ़ा निराश हो आगे बढ़ा । वह लाठी टेकता हुआ किसान के घर पहुँचा और कुछ खाने को मागा । किसान की स्त्री को उसे देखकर दया आ गई । उसने उसको बिठाया और पूछा—बाबा, तुम कहाँ के रहने वाले हो ? क्या तुम्हारे घर में तुम्हारी देख रख करने वाला कोई नही है ?

बूढ़े ने कहा—हैं क्यों नहीं ? मेरे बहुत से बाल बच्चे हैं । लेकिन कर्मों की गति विचित्र है । घर २ भाग कर पेट भरन पड़ता है । वे मेरी परवाह नहीं करते ।

किमान की स्त्री के पास जो रूपा सूत्रा भोजन था बड़े प्रेम से उसे गिलाया और रात भर बड़े आराम से उसे अपने घर में रखा ।

दूसरे दिन मरे किमान की स्त्री न देखा तो बूढ़ा कहा ननर नहीं आया । न जाने वह क्या चला गया था ।

परीक्षा समाप्त हो गई । लक्ष्मी और दया इन्द्र के आमन उपास्थित हुई । अब उनको मालूम हुआ कि वह बूढ़ा आदमी महाराज इन्द्र के सिवाय दूसरा कोई नहीं था । यह ज्ञान कर लक्ष्मी का मिर लज्जा में नीचा हो गया । वह समझ गई कि दया उदाई ।

१—लक्ष्मी यही है या दया ?

२—इन्द्र ने कैसे परीक्षा ली ?

३—तुम कैसे चाहती हो ?

श्रावक के मूल व्रत

जैन शास्त्र में गृहस्थ श्रावक के लिये बारह व्रतों का विधान किया गया है। उनमें ५ अणुव्रत होते हैं। अणु का अर्थ है छोटा और 'व्रत' का अर्थ है प्रतिज्ञा। साधुओं के महाव्रतों की अपना ग्रहस्थों के हिंसा आदि त्याग की प्रतिज्ञा मर्यादित छोटी होती है, अतः वह अणुव्रत हैं। तीन गुणव्रत होते हैं। गुण का अर्थ है विशेषता। जो नियम पांच अणुव्रतों में विशेषता उत्पन्न करते हों, अणुव्रतों के पालन में सहायक एवं उपकारी हों उनको गुणव्रत कहते हैं। चार शिचाव्रत हैं। शिचा का अर्थ अभ्यास करना है। जिनके द्वारा धर्म की गिनती जाती है, धर्म का अभ्यास किया जाय, उन प्रति दिन अभ्यास करने योग्य नियमों को शिचाव्रत कहते हैं।

५ अणुव्रत

- १ स्थूल हिंसा का त्याग—दिना किसी अपराध के व्यर्थ ही मारने के विचार से, प्राण नाश कर सकल्प में किसी जीव को नहीं मारना श्रावक का प्रथम अणुव्रत है। गृहस्थ जीवन में अपराध

- वाले और सूक्ष्म जीवों की हिंसा का त्याग
 अशक्य होने में नहीं होता ।
- २ स्थूल असत्य का त्याग—दुमरों के जान माल
 की हानि हो, जिमसे दुमरों में रुष्ट हो ऐसे स्थूल
 भूठ का त्याग गृहस्थ का दुमरा प्रत है ।
- ३ स्थूल चोरी का त्याग—चोरी करने के सकल्प
 से दिना आज्ञा किमी की वस्तु को उठा लेना
 चोरी है । जैसे किसी के घर में साध देना,
 दूतरी ताली लगाकर ताला खोलना, धरोहर
 मारना, आदि स्थूल चोरी का त्याग तीसरा
 अणुप्रत है ।
- ४ व्यभिचार का त्याग—अपने विवाहित स्त्री
 पुरुषों को छोड़कर अन्य किसी स्त्री पुरुषों से
 अनुचित सम्बन्ध नहीं करना और सदाचार का
 पालन करना गृहस्थ का, चतुर्थप्रत है ।
- ५ इच्छा परिमाण—धन, धान्य, सोना, चादी, भूमि
 और पशु आदि जितने भी पदार्थ हैं अपनी
 आवश्यकतानुसार उनको एक निश्चित मर्यादा
 कर लेना और आवश्यकता या मर्यादा में
 अधिक संग्रह नहीं करना पांचवा अणुप्रत है ।
 जैसे एक मैनिक के लिये फौजी नियमों का

पालन आवश्यक है, उमी प्रकार जैन गृहस्थ-
भायक, धारिका के लिये भी इन पाच मूलग्रतों
का पालन करना जरूरी है । निर्मा भी कुल या
जाति वा व्यक्ति विरिक्त पूर्वक उपरोक्त ग्रतों का
पालन करले में भायक कहला मरता है ।

१—धमी के कितन विभाग हैं ?

२—आणुमत का क्या अर्थ और उसके कितने
प्रकार हैं ?

३—प्रथम और परम आणुमत का स्वरूप कदो ?

पाठ २०

आत्मा (तत्व ज्ञान)

कमला-बिमला ? क्या तुम जानती हो कि आत्मा
अध की एक समान है ?

बिमला-सब की आत्मा एक समान कैसे हो सकती
है, कमला यहिन ? मुझे तो मरी आत्मा में और आपकी
आत्मा में ही बहुत फरक दिखाई द रहा है ।

- कमला-क्या फर्क है ? बताओ तो ।

विमला-मेरे जैसे हाथ पांव हैं वैसे आपके नहीं हैं ।
मुँह और नाक भी वैसे नहीं हैं । यह फर्क नहीं तो
क्या है ?

कमला-यह आत्मा का फरक नहीं है विमला, यह
तो शरीर का फरक है । आत्मा शरीर से अलग एक
दूसरी चीज है । जो सब प्राणियों में एक समान है ।
तुमने देखा होगा कि जब एक प्राणी मर जाता है तो
उसका शरीर निर्जीव हो जाता है । फिर उसको कुछ
दुख वृश्च नहीं मालूम होता है । लेकिन हाथ पांव और
आँख नाक तो वैसे ही रहते हैं । उनमें तो कोई अन्तर
नहीं आता । लेकिन फिर भी उनका काम बन्द हो जाता
है । क्योंकि उस शरीर से आत्मा अलग हो गई है । जब
तक वह (आत्मा) शरीर में रहती है तब तक शरीर
चलता फिरता है । लेकिन जब वह शरीर को छोड़ देती
है, तब वह शरीर मर जाता है । इस तरह अब तुम
समझ गई होगी कि आत्मा और शरीर एक नहीं अलग
अलग है और आत्मा के अभाव में शरीर मरता है ।
आत्मा कभी मरती नहीं है । वह सब काल एक ही
रहती है ।

विमला—भाप ठीक कहती हैं, कमला बहिन ! मैं तो अभी तक अपने शरीर का ही आत्मा समझ रही थी । लेकिन आज मालूम हुआ कि मेरा यह समझना गलत था । दरअसल आत्मा शरीर में स्वतन्त्र चीज है । लेकिन एक बात अभी तक मुझ समझ नहीं आई है ।

कमला—क्या बात समझ में नहीं आई है विमला ?

विमला—अगर आत्मा सब प्राणियों में एक समान है तो फिर बड़े हाथी के शरीर में बड़ी और चींटियों के शरीर में छोटी कैसे ही जाती है ?

कमला—यह भी अच्छा प्रश्न पूछा विमला ! इसे जान लेना भी जरूरी है । अच्छा, जब तुम रात को अपने कमरे में साती हो तो क्या तुम दीपक जलाकर सोती हो ।

विमला—मुझे अन्धेरे में डर लगता है कमला बहिन इसलिए दीपक तो जलाती ही हूँ ।

कमला—क्या तुम यह भी बता सकती हो कि उस दीपक का प्रकाश कहाँ तरफ रहता है ।

विमला—मेरे मारे कमरे में उसका प्रकाश रहता है ।

कमला—यदि उस पर बरतन ढाक दिया जाय तो फिर क्या उसका प्रकाश सारे कमरे में रह सकेगा ।

विमला-नहीं ।

कमला-ठीक इसी तरह यह शरीर एक चरतन है और आत्मा एक दीपक का तरह है । वह जिस शरीर में प्रविष्ट होती है, दीपक के प्रकाश की तरह उसी शरीर में समा जाती है । इस तरह दीपक पर से चरतन उठा लेने पर उसकी रोशनी सार कमरे में फैल जाती है, उसी तरह आत्मा भी चोटी के शरीर से निकल कर हाथी के बड़े शरीर में समा जाती है और फिर जिस तरह चरतन रख देने से दीपक की रोशनी चरतन में ही रुन्द हो जाती है, उसी तरह हाथी की आत्मा भी चोटी के शरीर में रुन्द हो जाती है ।

इस प्रकार छोट बड़े शरीर के अनुसार आत्मा भी छोटी बड़ी दिखाई देती है ।

१—आत्मा और शरीर अलग २ कैसे है ?

२—आत्मा मरती है या नहीं ?

३—आत्मा छोटा बड़ा शरीर कैम धारण करती है ।



कर्म और उसके प्रकार (अ)

विमला—वहिन, कल आपन यह बताया था कि सब्जी आत्मा एक समान है । लेकिन मुझे यह समझ में नहीं आया कि जब सब्जी की आत्मा एक समान है तो एक सुखी और दूसरा दुखी क्यों दिखाई देता है ?

कमला—यह सब कर्म का प्रभाव है, विमला । आत्मा जैसे २ कम करती है, उसी क अनुसार उसे फल भी भोगने पड़ते हैं । अन्धे बुरे कम क प्रभाव से ही आत्मा को सुख दुख भोगने पड़ते हैं । अन्धे कर्म करने से आत्मा को सद्गति और सुख प्राप्त होत है, तथा बुरे कम करने से दुर्गति और दुःख उठाने पड़ते हैं ।

विमला—कर्म किसे कहते हैं, कमला वहिन ?

कमला—जिनके द्वारा जीवों का मसार में भटकना पड़ता है और जिन्से जीव अपने मूल स्वरूप का नहीं पा सके उन्हें कर्म कहते हैं । क्या तुम जानती हो कि कर्म कितने हैं ।

विमला—नहा वहिन ! आप ही बताइय २ कितने और कौन २ म है ।

॥ कमला—कर्म आठ हैं, १ ज्ञानावरणीय २ दर्शना-
वरणीय ३ वेदनीय ४ मोहनीय ५ आयुष्य ६ नाम
७ गोत्र और ८ अन्तराय ।

विमला—रहिन ! इनका क्या मतलब है ?

कमला—विमला, आचरण का मतलब है परदा ।
जैसे किसी चीज व आगे परदा कर दिया जाय तो वह
परदा उस चीज को ढक लेता है, उसी प्रकार जो आत्मा
के अनन्त ज्ञान को ढाँके उसे ज्ञानावरणीय कर्म कहते
हैं । जैसे तुम अपना पाठ गूब याद करो, लेकिन फिर
भी वह याद नहीं हो तो इसका कारण ज्ञानावरणीय कर्म
का उदय समझना चाहिए । यह कर्म भ्रष्टा उपदेश देने
से, जान की या ज्ञानी पुरुषा को निन्दा करने से तथा
अपनी विद्या का घमट करने से बघता है । इसका विपरीत
आचरण करने से आत्मा का ज्ञान गुण प्रकट होता है ।

विमला—दर्शनावरणीय कर्म किसे कहते हैं ?

कमला—जो आत्मा के दर्शन गुण को प्रकट न
होने दे उसे दर्शनावरणीय कर्म कहते हैं । जैसे एक
राजा का पहरेदार किसी को अन्दर जाकर राजा का
दर्शन नहीं करने देता है, सब को बाहर से ही रोक देता
है । उसी प्रकार दर्शनावरणीय कर्म आत्मा के दर्शन

गुण को प्रकट नहीं होने देता है । बैठे २ नींद आना, आँखें कमजोर हो जाना या अंधा हो जाना इसी कर्म के फल हैं । यह कर्म किसी की आँखें फोड़ देने में, अपने पास रही हुई वस्तु को नहा दिग्माने में या मुनियों की ग्लानि करने में पधता है । इसके विपरीत आचरणों से आत्मा का दर्शन गुण प्रकट होता है ।

त्रिमला—वेदनीय कर्म किसे कहते हैं ?

कमला—जिस कर्म के उदय में आत्मा सुख और दुःख का अनुभव करे उसे वेदनीय कर्म कहते हैं । जैसे शहद भरी तलवार की धार की चाटने में सुख और दुःख यानी शहद के भिठोम से सुख और जीभ के फट जाने से दुःख, दोनों ही होते हैं । इसी प्रकार वेदनीय कर्म दोनों का अनुभव कराता है । जब सुख का अनुभव होता सातावेदनीय और दुःख का अनुभव हो तो असाता-वेदनीय समझना चाहिये । असातावेदनीय का पध दूसरे की दुःख देने में, रुलाने व किसी का मारने में होता है । इसके विपरीत दया करने से, सताप दिलाने आदि से सातावेदनीय कर्म का पध होता है ।

त्रिमला—अब यह बताये कि मोहनीय कर्म किसे कहते हैं और यह कैसे पधता है ?

कमला—जिस कर्म के उदय से आत्मा अपने को भूल जाय उसे मोहनीय कर्म कहते हैं । जैसे शराब पीने वाला शराब पीकर अपने को भूल जाता है, फिर उसे अच्छे घुरे का कुछ भी ध्यान नहीं रहता है । इसी प्रकार मोहनीय कर्म के उदय से भी आत्मा को हितहित का ज्ञान नहीं होता है । काम, क्रोध, मान, माया, लोभ आदि मोहनीय कर्म के उदय के ही रूप होते हैं । जैसे, कि-सुमद्रा ने क्रोध में आकर शान्ति को पीटा और उसकी कितायें लेली । इसने समझना चाहिये कि सुमद्रा को मोहनीय कर्म का उदय है । यह कर्म देव, गुरु और धर्म पर दोष लगाने से व काम, क्रोध, मान, माया, लोभ वगैरह करने से बचता है । इसके विपरीत क्षमा, विनय, मरलता और सन्तोष में उसका क्षय होता है ।

१—कम कितने हैं । कौन से हैं ?

२—मोहनीय कर्म कितने कहते हैं ?

३—ज्ञानावरणीय कर्म कितने बधता है ?



कर्म और उसके प्रकार (३)

विमला—अच्छा यहिन, चार कर्म तो आपने समझा दिये, अब यह बताइये कि आयु कर्म किसे कहते हैं ?

कमला—जिम कर्म के उदयसे आत्मा नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव के शरीरों में से किसी एक शरीर में रूपा रहे उसे आयु कर्म कहते हैं । इस कर्म के प्रभाव में आत्मा चारों गतियोंमें भ्रमण करता हुआ काल व्यतीत करता है । जैसे तुम्हारी आत्मा मनुष्य शरीर में रूपी हुई है और डायी वी आत्मा तिर्यञ्च शरीर में रूपी हुई है तो यह आयु कर्म का रदय ही समझना चाहिये । इस कर्म का बध चार प्रकार से हाता है जिसे कि—
१ बड़ी हिंसा व शाय करन में ३ मदिरा मास का सेवन करन से जाय नरक गतिका आयु बाधता है । २ छल कपट करन में तिथ च होता है । ३ विनय, सरलता और दयालुता आदि से जीव मनुष्य बनता है और ४ देव शायु का बन् होता है मुनिधर्म, आत्मकर्म एवं तपस्या की भाधना करने से ।

विमला—नाम कर्म किसे कहते हैं ?

निस कर्म के उदय से जीव को छोटी बड़ी तरह तरह की आकृतिया धारण करनी पड़े उसे नाम कर्म कहते हैं। जैसे चित्रकार मनुष्य, हाथी, स्त्री, बिल, घोड़ा, ऊट, आदि तरह २ के चित्र बनाता है। जैसे कि— सुन्दर रूप वाला, कुरूप, लम्बा, छोटा, बड, मीठी आवाज वाला, मोटी आवाज वाला, अघा, बहरा, लूला, लगड़ा आदि। हमारा शरीर, आस, नाक, कान, मुह आदि सब नाम कर्म के प्रमान मे ही बने हुए हैं। यह कर्म दो तरह का है। शुभ नाम कर्म और अशुभ नाम कर्म। अगर हाथ, पाव, आस, नाक, कान आदि सुन्दर हैं और आवाज भी मधुर है तो यह शुभ नाम कर्म का उदय समझना चाहिये। जिनका शरीर ठीक नहीं हो, उसमें रक्त विकार या कोढ़ हो, अधिक लम्बा या छोटा हो आवाज माटी हो, बदसूरत हो तो उनका अशुभनाम कर्म का उदय समझना चाहिये। यह कर्म लडने से, शरीर के द्वारा बुरे काम करने और बुरे बोलन में तथा दूसरे का बुरा सोचने से बंधता है। इससे विपरीत अच्छा काम करने से, और सबका भला चाहने से शुभ नाम कर्म बंधता है।

विमला—गोन कर्म किसे कहते हैं, बहिन ?

बलला—निस कर्म के उदय से जीव ऊँच नीच

कुल में पैदा हो उसे गोत्र-कर्म कहते हैं । जैसे कुम्हार छोटे दंड मय तरफ के परतन बनाता है, उसी प्रकार गोत्र-कर्म भी जोत्र को ऊँचा नीचा बना देता है । उच्च गोत्र-कर्म के उदय में जीव उच्च कुल में पैदा होता है और नीच गोत्र-कर्म के उदय से नीच कुल में । अपनी जाति, कुल, मित्रा और रूप आदि का गत्र करने से तथा दूसरों की घृणा करने और दय गुरु की आशातना करने से इस कर्म का वध होता है । इससे विपरीत आचरणों में उच्च गोत्र का वध होता है ।

विमला—अब अन्तराय कर्म और उसके वध का क्या कारण बताइये ?

कमला—जिस कर्म के उदय में किसी कार्य में दिव्य बाधा आजाय उसे अन्तराय कर्म कहते हैं । जैसे कि किसी राजा ने किसी आदमी को सौ रुपये इनाम देने की आज्ञा दी, किन्तु खजाची ने उसे देने में बाधा उत्पन्न कर दी । जिस तरह उस आदमी का रुपय मिलान में राजा का साहय बाधक हो गया, वही पर उस मनुष्य के अन्तराय कर्म का उदय सम्भना चाहिये । जैसा कि कल तुमने कहा था—शान्ति रोटी खा रही थी और अकस्मात् गन्दर आकर उसकी राटी छीन ले गया तो यह शान्ति के अन्तराय कर्म का उदय सम्भना

चाहिये । अतः यत्ताथो तुम ठीक तरह से समझ गई हो कि नहीं ?

विमला—हां बहिन, आठ कर्मों के विषय में तो मैं पूरी तरह से समझ गई हूँ ।

कमला—अच्छा एक बात थी। याद रखने की है विमला । यह यह कि इन आठ कर्मों में १ ज्ञानापरणीय २ दर्शनापरणीय ३ मोहनीय और ४ अतराय ये चार घातिक कर्म कहे जाते हैं । शेष चार अघातिक कर्म कहलाते हैं । जो कर्म आत्मा के ज्ञान, दर्शन आदि मूल गुणों का घात करते हैं, उन्हें घातिक कर्म कहते हैं एतजो कर्म आत्मा के ज्ञान, दर्शन आदि मूल गुणों का घात नहीं करते उन्हें अघातिक कर्म कहते हैं ।

१—अघातिक कर्म किसे कहते हैं ? वे कौन से हैं ?

२—अग्निहोत्रों के बितने कर्म हैं ?

३—अतराय कर्म का स्वरूप यत्ताथो ?

सती राजेमती

प्यारी कन्याओं ! क्या तुमने सती राजेमती का नाम सुना है ? वह महाराजा उग्रसेन की कन्या थी । राजेमती सती सुलभ, सर्व गुण सम्पन्न राजकुमारी थी । उसकी सौम्यता और सुन्दरता को देखकर श्री कृष्ण ने अपने चचेरे भाई नेमिनाथ के माथ उसका मन्थन कर दिया था । कुमार नेमिनाथ जिनका दूसरा नाम अरिष्टनेमि है, महाराजा महेंद्र विजय के पुत्र थे । वे उचपल से ही शूरवीर एवं सभार कार्य में उदासीन थे । उनकी इच्छा विवाह करने की नहीं थी । परन्तु श्री कृष्ण महाराज की आज्ञा पूरी बात स्वीकार कर वे चुप रहे ।

कुछ दिन बीत । दोनों तरफ विवाह की तैयारियाँ हान लगीं । बड़े ठाट वाट से अरिष्टनेमि की बरात विवाह के लिए रवाना हो गयी । श्री कृष्ण महाराज इस बरात के मुखिया थे । कुमार अरिष्टनेमि जब तोरण के पास आये, तो उन्होंने एक गड में पशुपता का बन्द किये हुए देखे । जो कि बड़े जोर से शोर मच रहे थे । उनकी करुण पुकार को सुनकर नेमि कुमार ने अपने सारथी

से पूछा सारथी ! ये प्राणी यहाँ क्यों बन्द किय गये ह ? सारथी ने कहा प्रभो ! रात में आय हुए मेहमानों के लिए ये प्राणी इकट्ठे किये गये हैं । अतः भयभीत हो चिन्ता रहे हैं । अरिष्ट नेमि न कहा—क्या मेरे विवाह में यह घोर हिंसा की जायगी ? विचार निर्दाय मर प्राणियों को मारा जायगा । ममभदार के लिए इशारा ही काफी होता है । क्षण मात्र में अरिष्ट नेमि की आँवों रु सामने दुनिया के क्षणिक गगन चित्रपट की तरह एक के बाद एक उपस्थित हो गये । फिर क्या था, जो शरीर अभी अभी विवाह की-गुप्तो में आभूषणों से अलंकृत था, देखते ही देखते वह भूषण रहित सादा हो गया । कुमार अरिष्ट नेमि पशुओं को लुटारने समय लेने का उत्तर ही गये । राजकुमार का यह आश्चर्य परितन मयका आश्चर्य जनक प्रतीत हुआ । श्रीकृष्ण ने उन्हें कई तरह से ममभाया लेकिन कुमार पर किसी का कुछ असर नहा हुआ । वे अपने विचार पर दृढ़ रहे और सामाजिक वैभवं प्रियमों को ठोकर मारकर मुनि बनने को निकल गये ।

जब ये समाचार राजमती के कानों में पटुच तो यह सुनत ही अचेत हो गयी । माता, पिता, दाम दामियाँ सब उदाम होगये । उ राजमती के मुँह पर पखा करने

लगे । मूर्छा दूर होते ही राजेमती ने अपनी माता से कहा माँ क्या राजकुमार ने मुझे त्याग कर दीक्षा ग्रहण करली है ? अगर यह सच है तो फिर मैं यहाँ क्यों रहूँ ? माँ मुझे भी आज्ञा दो, मैं भी कुमार के साथ दीक्षा लेकर जाना चाहती हूँ ।

माता ने उसने सिर पर हाथ फेरत हुए कहा बेटी ! यह क्या कह रही हो ? राजकुमार ने दीक्षा लेली तो क्या हुआ । मैं तेरे लिए दूसरे घर की खोज कराऊँगी और तेरा विवाह कराऊँगी । बेटी ! तू क्यों इतना दुःख करती है । राजेमती ने कहा माताजी यह अगर क्या कह रही हैं ? मैं तो तन गग से कुमार अग्नि नेमि को ही अपना पति मान चुकी हूँ । भले ही वे मुझे त्याग कर चले गये हों, पर मैं थन उन्हें नहीं त्याग सकती । इसलिए अगर आप मेरा हित चाहती हैं तो मुझे भी दीक्षा ग्रहण करने की अनुमति दीजिये ।

राजा और रानी ने यह तरह से समझाया, और दास दासिया ने भी उम मनाया, लेकिन राजेमती ने अपना विचार नहीं बदला । आखिरकार उमने अपने माता पिता की आज्ञा से दीक्षा ग्रहण करली ।

राजेमती की दीक्षा के समाचार से कई राजकुमारि-
काएँ विरक्त हो गयीं, और बात ही बात में राजेमती के
साथ मैकड़ों दाँचिन हो गयीं । राजेमती भी उन सबको
साथ लेकर गिरनार पर्वत पर चली गई । जहाँ कुमार
अरिष्टनेमि तप कर रहे थे । वहाँ पहुँच कर उसने भी
कठिन तप करना प्रारम्भ किया । जिनसे कुछ ही दिनों में
उसको केवल ज्ञान प्राप्त हो गया ।

‘प्यारी कन्याओं ! अगर तुम भी राजेमती की
तरह अपना आचरण पवित्र बनाभोगी और अपने धर्म
पर दृढ़ रहोगी तो तुम्हारा नाम भी उनकी तरह दुनियाँ
में अमर हो जायगा ।’

१—अरिष्टनेमि साधु क्यो बत ?

२—राजेमती न अपनो माँ मे क्या कदा ?

३—नेमि नाथ कौन थ ?

मेरी भावना

(७)

कोई दुरा कहा या अन्धा, लक्ष्मी आये या जावे ।
 लाग्यो रपों तरु जीऊ, या मृत्यु आप ही आजावे ॥
 अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आये ।
 तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कमी न पद डिगने पावे ॥

(८)

होरु सुख में मग्न न फूलें, दुःख में कमी १ घरारों ।
 परैत नदी शमशान मयानक, अटनी से नहीं मय खाव ॥
 रहें अडाल अकप निरतर, यह मन दृढ़तर बन जाव ।
 इष्ट वियाग अनिष्ट योग में, सहनशीलता दिखलावे ॥

(९)

मुझी रहें सब नीर जगत रे, कोई कमी न घबराव ।
 धैर पाप अभिमान छोडकर, नित्य नये भगल गावें ।
 घर घर चर्चा रहे धम की, दुष्टत दुष्कर हो जावें ।
 ज्ञान चरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्म फल सब पावें ।

इति मीति व्यापे नहीं जगमें, पृष्टि समय पर हुआ करे ।
 धर्म निष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे ॥
 रोग मरी दुर्मिच्छ न फैले, प्रजा शान्ति से लिया करे ।
 परम अहिंसा धर्म जगत में, फैल मरु हित किया करे ॥

फैल प्रेम परस्पर जग में, माह तुर पर रहा करे ।
 अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहीं, कोई सुगम म कहाकरे ॥
 धनकर मरु 'युग पीर' हृदय म, देशान्ति रत रहा करे ।
 चस्तु स्वरूप विचार सुशी म, मरु दुख मकट महाकरे ॥

फठिन शब्दाथ —

सामञ्च = लाभ । अडोल = अचल । निःतर = सदा ।
 इष्ट = प्रिय । दुःपृष्ट = घराकाम । कटुक = कटुवा ।
 इति = अलग अलग गेग टिडडिषों चूहों का उपद्रव ।
 मरी = एक तरह की धोमारी । अटरी = जगत् ।
 अकप = स्थिर । अदुःख = मजबूत । शियोग = जुगाई ।
 दुःकर = कटिन । मीति = मरु । दुर्मिच्छ = अकाल ।
 मकट = मुसीबत ॥

मेरी भावना

(७)

कोई घुरा फहा या अन्धा, लम्बी धावे या जारे ।
 लाखों वर्षों तक जोऊ, या मृत्यु आन ही आनावे ॥
 अथवा कोई कैमा ही मय, या लालच देने आरे ।
 वो भी न्याय मार्गसे मेरा, कमी न पद डिगने पावे ॥

(८)

हाकर मुख में मग्न न फूलें, दुख में कमी न धररावे ।
 पर्वत नदी शमशान भयानक, अटवी से नहीं मय छारे ॥
 रहें अडाल अक्प निरतर, यह मन दृढ़तर बन जाय ।
 इष्ट वियाग अनिष्ट योग में, महनशीलता दिखनावे ॥

(९)

सुखी रहें सब चीज जगत के, कोइ कमी न धररावे ।
 वैर पाप अभिमान छोडकर, नित्य नये मग्न गावे ॥
 घर घर चर्चा रहे घम की, दुष्कृत दुष्कर हो जावे ।
 ज्ञान चरित उन्नत कथपता, मनुज जन्म फल मय पावे ॥

(५७)

(१०)

इति भीति व्यापे नर्हा जगमें, वृष्टि समय पर हुआ करे ।
घर्म निष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे ॥
रोग मरी दुर्मिन्न न फैल, प्रजा शान्ति मे लिया करे ।
परम अहिंसा घर्म जगत में, फैल मर्य हित किया करे ॥

(११)

फैल प्रेम परस्पर नम म, माह दूर पर रहा करे ।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहीं, काट मुख से कहाकरे ॥
घनकर मर 'युग गीत' हृदय से, देशान्तरि रत रहा करे ।
यस्तु स्वरूप विचार सुणी म, मर्य दख मकट महाकरे ॥

कठिन शब्दाथ —

लाभच = लाभ । अडोल = अचल । निःतर = मर्य ।
इष्ट = प्रिय । दुष्ट = पराकाम । कटुक = कड़वा ।
इति = अलग अलग रोग । द्विद्विषाँ चूडों का उपद्रव ।
मर्य = एक तरह की बीमारी । अटरी = जगल ।
अकप = शिर । हृदयर = मज्जून । त्रियोग = जुगार ।
दुस्वर = कठिन । भीति = भय । दुर्मिन्न = अशाल ।
मर्य = सुधीयत ॥



सती सुमद्रा

जिनदाम अपनी नगरा क एक प्रमुख सठ थे । आपने समाज में ही नहा राज्य में भी अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त की थी । पति पत्नी दोनों की अपने धर्म पर अटूट श्रद्धा थी । उनकी एक मात्र प्यारी मन्तान का नाम था 'सुमद्रा' । सुमद्रा पर भी उमक माता पिता क धार्मिक सस्कारों का अमर पड़े बिना न रहा । उमन बचपन में ही यह प्रतिज्ञा करली कि "मैं विवाह करूँगी तो किसी जैन सुद्ध के साथ ही, अन्यथा आनोवन ब्रह्मचर्य का पालन करूँगी ।" माता पिता सुमद्रा की इस प्रतिज्ञा से असन्तुष्ट नहीं थे । लेकिन अब वे योग्य धार्मिक वर की तलाश में सदा चिन्तित रहन लगे ।

एक दिन सुद्धदाम नामक एक सठ का लड़का, उम नगरी में चला आया । सुमद्रा के रूप को देखकर वह उम पर मोहित हो गया । उसने उमके साथ विवाह करना चाहा, लेकिन जैन जन बिना दूमरा कोई चारा नहा था । इसलिये उम धीरे धीरे जैन आचार विचारों

का ज्ञान करने लगा और मद्रा मुनिराजों के पास धर्म
ग्रन्थों में ही रहने लगा ।

कुछ ही दिनों में उसने अपने नरली धर्माचरण से
बड़ा प्रसन्न कर लिया । मेठ जिनदाम ने उसे धार्मिक
मन्त्र कर प्रसन्नता से अपनी लडकी सुमद्रा के साथ
सरा रिवाज कर दिया ।

विवाह हो जाने पर सुमद्रा अपने ससुराल गई तो
वही तरह वहा भी अपना व्रत नियम करने लगी ।
से देख कर—एक दिन बुद्धदास की माता ने उसमे
—बहुरानी ! इस तरह मुँहपर बाँधकर बैठ जाना
र शान्तिनाथ शान्तिनाथ करना तो मूर्खों का काम
। अपने सद् भाग्य मे आज तुमको बुद्ध का धर्म मिला
इसलिये अब अपने इस पाखण्ड धर्म को छोड़ कर
परम धर्म का आराधन कर बेटी । इससे तेरा
भाग्य होगा ।

सुमद्रा ने सविनय उत्तर देत हुए कहा—माताजी !
की आज्ञा का पालन करना मेरा कर्तव्य है । क्योंकि
मेरे आपकी यह वन चुकी है । लेकिन आज्ञा
मोह मे रहित होनी चाहिये । मेरे परम धर्म के
इन में आपकी आज्ञा बाधक नहीं होनी चाहिये ।

यही मेरो प्रार्थना है। माताजी मुझे मेरा धर्म आपने
भी अधिक प्याग है। और आरहन्त गरण ही अमहा
का महारा है। इसलिय मैंने इस हृदय में अगीकार किया
है। अब मला इसे कैसे आइ मकती हूँ।

माता ने लोभ देने हुए सुमद्रा से कहा-बहु अ
तु वीर धर्म स्वीकार कर लगी तो मार घर का भी
तुझे सौंप दूंगी। घरके मय लोग तेरा आदर सम्मान
करेंगे। इसलिये नादानों मतकर और अपने हठ
छोड़द। सुमद्रा ने रुका, माताजी आप मुझे विवश न करे
मैं अपने धर्म को छोड़कर मान सम्मान को पाना
समझती हू। मुझे ऐसे मान सम्मान की भूख नहीं
मुझे तो मेरा धर्म ही प्यारा है।

माता ने क्रोधित होकर कहा लाता क दय बात
गर्हा मानते हैं। अच्छा अब देखनी हूँ तू कैसे
मानती है। भोली बहू ! क्या मगर मैं वर रखकर मला
तालाप में आराम से रह मरेगी ?

माता के कहने पर सुदामा ने भी कुछ नहीं
सुमद्रा को समझाया, प्रलोभन दियाया और अन्त
भी लोभित सुमद्रा पर इसका कोई अ

नहीं हुआ। उसने कहा प्राणेश्वर ! आप चाहे जितना
 दण्ड देवें मैं उन्हें हँसती हँसती सहन करूंगी लेकिन मैं
 धर्म से विमुख होना पसन्द नहीं करूंगी। स्वामिन् !
 सुख जिसे नहीं सुहाता है ? लेकिन जो सुख धर्म का
 विद्वान् माँगता—रह सुख दुःख से भी बुरा होता है।
 अपनी धात्मा को और आपको धोखा देना नहीं
 चाहती। मैं धोखा देकर सुख पाना भी महान् पाप
 समझती हूँ—स्वामी।

बुद्धदास ने आवेग में चाकर कहा—यस, चुप रह।
 मर अधिक बुद्ध नहीं सुनना चाहता। यह अच्छी
 बात से समझ लेना कि जब तक तूँ पीछे धर्म को
 स्वीकार नहीं करोगी तब तक मैं तुम्हें मापण भी नहीं
 दूँगा। देवता हूँ कब तक तूँ अपना धर्म नहीं
 छोड़ती है।

सुमित्रा ने नम्र होकर उत्तर दिया। आप जैसा भी
 वक्त ससक कर। आप मेरे स्वामी हैं। मैं आपको मार्ग
 बाधक नहीं बनूँगी, हम अगलाशा के तो ससार में
 लड़ दो ही महारे हैं। एक स्वामी और दूसरा परमात्मा
 । दुर्भाग्य से स्वामी छोड़ दे, तो फिर स्वामी को परमा-
 त्मन रह जाता है।

जो जीव धर्म करते हैं—धर्म का उपदेश देते हैं, और धर्म से ही अपनी जीविका चलाते हैं उनका जागृत रहना अच्छा है। क्योंकि धर्मों पुरख जागे रहने पर स्वयं भी धर्माचरण करेंगे और दूसरों को भी मर्यादा में जोड़ेंगे। अतः धार्मिक पुरुषों का जागना अच्छा है।

(३) जयन्ती ने फिर दूसरा प्रश्न पूछा भगवान् ! प्राणी सबल अच्छा या दुर्बल ?

भगवान् ने कहा जो जीव अधर्मों हैं, तरह तरह के पाप करते हैं, वे दुर्बल अच्छे हैं। क्योंकि वे दुर्बल रहने से पाप कम नहीं कर सकेंगे। इसी तरह धार्मिक प्राणियों का सबल होना अच्छा है। क्योंकि वे बलवान् हुए तो कष्टों को सह कर स्वयं का अधिक कल्याण कर सकेंगे।

(४) जयन्ती ने फिर प्रश्न किया—भगवान् ! जीवों का परिश्रमी बन अच्छा है या आलसी बन ?

भगवान् ने कहा जयन्ती ! जो जीव अधर्म करने वाले हैं—उनका आलसी बनना अच्छा है। क्योंकि वे

आलस्य में पड़े रहेंगे तो अधर्म का कार्य अधिक नहीं कर सकेंगे। आलस्य के कारण रही हुई पापाचर्यों की कमी भी उनका लिये और दूसरों के लिये भलाई का निमित्त बनेगी। इसलिये अधर्मी जीवों का आलसीपन ही अच्छा है। जो जीव धर्मी और धर्मानुरागी हैं उनका परिश्रमीपन अच्छा है। वे परिश्रमी होंगे तो स्वयं भी सत्कर्म का प्रियण साधन करेंगे और दूसरों को भी अपने साथ धर्म में लगा सकेंगे। परिश्रम की कमी में वे अधिक उपकार नहीं कर सकते। इसलिये, उनका परिश्रमीपन अच्छा है।

(५) जयन्ती न अन्तिम प्रश्न पूछने हुये कहा—श्रुत इन्द्रिय के बशीभूत होकर जीव क्या कर्म बाँधता है ?

भगवान ने उत्तर दिया—है जयन्ती। श्रुत इन्द्रिय के अधीन बना हुआ जीव शीघ्र कर्म को छोड़कर घाना-वर्णीय, दर्शनापरणीय, वेदनीय, मोहनीय, नाम, गोत्र और अन्तराय इन सात कर्मों को छोटी स्थिति के हों तो टूट करता है।

मन्द रसवाला को तीव्र रसवाला करता है। इसी

तरह पाँचों इन्द्रियों के वशीभूत बने हुए जीव-की भी गति समझ लेनी चाहिये ।

इस प्रकार 'भगवान की गायी सुनकर 'जपन्ती आविका को बँडा सन्तोष हुआ, 'इमसे सशय दूर हुआ और वह खुशी खुशी अपने घर लौट आई ।'

प्रश्न

१ जपन्ती कौन थी ?

२ उमन भगवान से क्या २ प्रश्न पूछे ?

३ जीवो का सोना अच्छा है या जागना ?

जैनधर्म की विशेषता

पाठ २८

'जैनधर्म' का स्थान समस्त क विविध धर्मों में अजोड़ है । वह प्राचीनता के साथ अपनी मौलिक विशेषता भी रखता है । शैव, वैष्णव, बौद्ध और ईसाई आदि मतों की तरह जैन यह नाम किसी व्यक्ति विशेष का सूचक नहीं

है। जैन का अर्थ है राम, 'क्रोध आदि विकारों को जीतने वालों का धर्म, 'अर्थात् शिव,' महावीर या महाश्वर कोई भी नाम क्यों न हो जिसने अपने गणादि दुर्गुणों का नाश कर दिया है, उनका घनाया हुआ मार्ग ही जैन धर्म है। इतना व्यक्ति मोह में गिरित कोई धर्म नहीं मिलता। जैन धर्म की प्रथम विशेषता इसमें व्यापकता है।

समस्त के अन्य धर्मों की अधिक से अधिक प्राणियों का अधिकतम हित ही जहाँ इष्ट है, वहाँ जैन धर्म की समस्त प्राणी मान का अधिक से अधिक हित व्यापक है। अन्य धर्मों का पालन बहुत हुआ तो मनुष्य मात्र कर सकते हैं किन्तु जैन धर्म का द्वार तो स्त्री, शूद्र ही नहीं, पशुओं के लिये भी खुला है। जैन शास्त्र में ब्रह्मर्षि, ऋषि, नाग और सुम्बर आदि क कई उदाहरण मिलते हैं। जिनमें धर्म की भावना में उनसे अधिक ध्यान देकर तक बतलाई गई है।

जैन धर्म का कहना है कि मनुष्य ही जैन धर्म के लिए उत्तम जाति, बुल या उष वैश्व मे नहीं मिलते हैं।

कोई भी गुणवान पुरुष धर्म का पालन कर मनुष्य से देव बन सकता है। इस प्रकार विचार वान प्राणी मान को धर्म के द्वारा आत्म विकास का अधिकारी बनाना जैन धर्म की खास विशेषता है। दूसरी विशेषता—यों तो अहिंसा का उपदेश सभी धर्मों में मिलता है परन्तु जैन धर्म की तरह पूर्ण अहिंसा का विचार उनमें नहीं मिलता। अधिकता से वे सब मनुष्य रचा का ही उपदेश करते हैं। हा कुछ भारतीय धर्मों में पशु रचा का भी अवश्य उपदेश मिलता है, किन्तु धर्म और देव के नाम पर वहा हिंसा का विधान भी कर दिया गया है। अतएव वैसी अहिंसा अपूर्ण है।

जैन धर्म मनुष्य पशु आदि के सिवाय सूक्ष्म से सूक्ष्म कीट और पृथ्वी जल आदि के जो सूक्ष्म जीव हैं उनकी भी हिंसा का निषेध करता है।

जैन धर्म न पूर्ण अहिंसा की साधना के लिये योग्यतानुसार क्रमिक मार्ग भी बताया है। जैन धर्म के माधु छोटी-से छोटी हिंसा को भी बचाने की कोशिश

है। साधुओं का पैदल, बिना किसी सवारी के अमण
इसी मन्त्र से होता है।

हवा के सूक्ष्म जीवों की भी हिंसा न हो इसीलिए उनके
मुँह पर मुखवर्तिका हुमा करती है। कच्चे फल फूल
और पत्त आदि, का भक्षण भूरे रहने पर भी न लाग
नहीं करते। अहिंसा के लिये इतना सूक्ष्म विचार और
आचार अन्य शास्त्रों में नहीं मिलता। इसलिये अहिंसा
की पूर्णता जैन धर्म की दूसरी विशेषता है।

प्रश्नावली

१. जैन धर्म की व्यापकता किस दृष्टी से है ?
२. अन्य धर्मों से जैन धर्म की अहिंसा में क्या विशेषता है ?
३. अहिंसा के लिए जैन मुनि कौसी साधना करते हैं ?



सन्त वाणी

पाठ २६

समझ मार समार में, समझ टाले दीप ।

समझ समझ कर जीवडा, गया अनन्ता मोच ॥१॥

समभू शक्ते पाप से, अणु समभू हर्षन्त ।
 वे लूखा पे चीकना, इणु विध कर्म मढन्त ॥२॥
 सिद्धा जैसो जीव हँ, जीव मोही सिद्ध होय ।
 कर्म मैल का अन्तरा, धूमके विरला कोय ॥३॥
 निज आत्म को दमन कर, पर आत्म को चीन ।
 परमात्म का भजन कर, सही मत परवीन ॥४॥

कुण्डलिया—

- राम नाम तो रुच गयो, ता घर धन्धो नहीं होय ।
 धन क कारण पच मरे तो राम न रुचियो कोय ॥
 राम न रुचियो काय, लोक नै यु भरमारै ।
 सीधी टेक समाय, चिरा जीका छोडी नडां जाये ॥
 लौकिक महिमा कारणे, सन्त धराये नाम ।
 'रतनचन्द्र' कहै तेहने किण विध मिलसी राम ॥
 चिही रुमडां रागला, रात पड्या नडा ग्याय ।
 नर देह धारी मानवी, रात पड्या किम ग्याय ॥
 रात पड्या किम खाय, जाय मार्या त्रसप्राणी ।
 कीट पतगा हु धुवा पडे भाखा में आणी ॥

लट गजोई सुलसली, ईली-अएड ममत ।
 'रतन' कहे धिरु तेइने, खाये नर कर हेत ॥
 जलोइर उत्पन्न हुए जू के पड़िया पेट ।
 जाय मुरा में मक्षिका वमन करावे नेट ॥
 वमन करावे नट घट तज मन धठाई ।
 बाल कर सुर भग, कोढ़ मकड़ी यी थाई ॥
 कपाली सड सड मरे विच्छू तणे मम्बन्ध ।
 'रतन' कहे तन मानयी, रात्रि भोजन अन्ध ॥
 रात्रि भोजन दोष अति, देखो वेद पुराण ।
 एक वर्षरा त्याग में छ मासी पछवाण ॥
 छः मासी पछवाण आण नर मन में समता ।
 पावे अमर विमाण, मिले सुख मन ने गमता ॥
 'रतनचन्द' धन मानयी सुण सुण द छिटकाय ।
 अल्प दिनां रे मायने, अमरापुर मे जाय ॥

प्रश्नावली

- १ समभू आर वे समभू का अंतर बताओ ?
- २ सिद्ध आर सामान्य जीव में क्या फरक है ?
- ३ नामधारी सत्त के लिये क्या कहा है ?
- ४ रात्रि भोजन से क्या क्या दानिया होती है ?
- ५ रात्रि भोजन के त्याग में क्या फल है ?

जैन इतिहास की बातें

पाठ ३०

प्र०—क्या जैन धर्म भारत वर्ष में वैदिक धर्म के समान प्राचीन है ? महावीर स्वामी क पहले भी इसके कोई धर्म प्रवर्तक हुए हैं ?

उ०—हाँ जैन धर्म वैदिक धर्म के समान ही नहीं किन्तु उससे भी अधिक प्राचीन है। मन्त्र यह है कि जैन तीर्थङ्कर अरिष्टनमि आदि का उल्लेख वेदों में भी मिलता है। इतिहास काल से अगणित वर्ष पूर्व श्री आदि देव ने इसका पहले उपदेश किया था। उनके पीछे एक दूसरे के बाद लम्बे काल से २३ धर्म प्रवर्तक और हो चुके हैं।

प्र०—उन धर्म में मुख्य सम्प्रदायों कितनी और कौन २ सी हैं ?

उ०—जैन धर्म की मुख्य सम्प्रदायें दो हैं—श्वेताम्बर और दिगम्बर। श्वेताम्बर सम्प्रदाय के साधु केवल सफेद

रग क ही बस रखत है दूसरी तरह के नहीं । ऐसे मुनिओं के कारण यह संप्रदाय भी श्वेताम्बर कहलाती है । रजो हरण और मुखवस्त्रिका श्वेताम्बर साधना का खास चिन्ह है जो प्रत्येक मुनि के पास रखा करते हैं । पात्र, पुस्तक आदि धर्म साधनों के सिवाय वे किसी वस्तु का संग्रह नहीं करते । दिगम्बर संप्रदाय के साधु बिलकुल नग्न रहते हैं वे धर्म साधन तरीरे माण्डिचड़ी और कमंडल का पास में रक्खा करते हैं ।

श्वेताम्बर संप्रदाय में एक मूर्तिपूजा को धर्म का अंग मानती है और दूसरी इस धर्म का अंग नहीं मानती इसलिये मूर्तिपूजक एवं अमूर्तिपूजक ऐसी दो संप्रदायें हैं । मूर्तिपूजक-मन्दिरमार्गी के नाम से प्रसिद्ध है । अमूर्तिपूजक में साधुमार्गी और तेरापथी दो संप्रदाय हैं । साधुमार्गी को स्थानक्यामी भी कहते हैं । दोनों में एसा अन्तर यह है कि पहली मन्दिर और मूर्तिपूजा के आरंभ में धर्म मानती है दूसरी नहीं । मूर्ति पूजक संप्रदाय मुख वस्त्रिका हाथ में रखती है और अमूर्तिपूजक उसको मुख पर बाँधे मारते हैं । तेरापथी के सिवाय अन्य सब

सप्रदायों दान दया और परापकार में धर्म मानती हैं ।
 तेरापयी केवल अपन साधुओं को दान दन में ही धर्म पुण्य
 मानते हैं दूसरे को दान दन और पाठशाला आदि चलाने
 में पुण्य नहीं मानत ।

प्रश्नावली

- १ जैन धर्म का प्राचीनता क क्या सबूत ह ?
- २ श्वेताम्बर मे कितनी सप्रदायों हैं ?
- ३ सप्रदायों में परस्पर क्या पक्क ह ?



महावीर जन्म

पाठ ३१

हुआ भारत में नव अवतार ।

हुए अपशकुन पाप मदन मे मुदित हुआ ममार ॥ हुआ ॥

देवा न चादिन राजाय ।

जन्म महात्मन करन आये ॥

मुदित हुए नारकी जीय भी, श्रीरो की क्या बात ।

हुए भूठ हिसा आदिक पापो के घर उत्पात ॥

हुआ पापो का मण्डा फोड़,।

धर्म भी आया ; यन्धन तोड़ ॥

मिटा दीन-दबल मनुजा के मुख का हाहाकार ।

- हुआ भारत में नव अवतार ।

(२)

हुआ भारत में नव अवतार ।

धर्म सूर्य उगा आलोकित हुआ अखिल ममान ॥हुआ०॥

अगलाये अचल पमार कर ।

बोल उठी आवा करुणाधर ॥

नूतन आशामो मे मरने, नवा दिया निज माथ ।

कहा किमी ने वैध हमारा 'कहा किमी ने नाथ ॥

हुए आशा 'युत मारे लोग' ।

घटने लगा अधम, कुरांग ॥

पृथ्वी चिन्ता उठी नाथ ! अब हरिये मेरा भार ।

हुआ भारत में नव अवतार ।

(३)

हुआ भारत में नव अवतार ।

पशु, निर्बल, अबला, शूद्रों की प्रभुने सुनी पुकार ॥हुआ०॥

लाखों पशु मारे जाते थे ।

मुस में तण रस चिन्लाते थे ।

वही नहा काई देता था, उन पर क्रुद्ध भी ध्यान ।
शोषित से रगता जाता था, मारा जगत महान् ।

लगे मिट्टन हिंसा के फाएट ।

दया में गूज उठा ब्रह्माएड ।

मिटी गर्जना और सुन पढ़ी करुणा की भकार ।
हुआ भारत में नव अवतार ।

हुआ भारत में नव अवतार ।

दादी गई सभी तीवारे रदा न कारागार ॥ हुआ ० ॥

जग में यजा साम्य का डका ।

मत की निरुल गई सब शका ।

घृणा और विद्वेष ने ठहरे, सजा प्रेम का साज ।

बैठे पास पिता के चारों माई मिल कर आज ।

हुआ भूँठों का मुँह फाला ।

सत्य का हुआ बोलमाला ।

एक बार हिल उठे हृदय वाशा के साथ, तब
हुआ भारत में नव अवतार।

—कवयित्री

प्रश्नावली

- १ महावीर के जन्म से क्या हुआ ?
- २ दूसरी कविता में क्या बताया गया है ?
- ३ कविता अभ्यास करा।



गुरुचंदना

पाठ ३१

(तज—आशो र कर्मणो)

आशो ७ अब प्यारी सखियों के लिये
 प्रीत उठ मंगलमय प्रसन्न कर्मणो ।
 अब २ के उपकारी सतगुरु, तब ही
 कनक कामिनी के जो त्वाण्डुल कर्मणो । १११
 कर्म बंध छेदन के हेतु, तब ही

गुरु मुख देखे दुःख टले मच होरे मगलाचार ।
 सुर तरु सम सबो नित भगिनन सुख शाति दातार ॥३॥
 उपकारी मदगुरु मम दूजा नहा कोई ससार ।
 मोह भँवर में पड हुए को यही बडा आधार ॥४॥
 क्रोध, लोभ मे दूर हटाकर देते हमें वचाय ।
 इसीलिये कहता है 'गनगुनि' गुरु गरण लो जाय ॥५॥



यदि आप जैनी हैं ?

तो

जैन साहित्य, जैन संस्कृति, जैन इतिहास के ज्ञान
प्राप्ति हेतु जैनाचार्यों व जैन विद्वानों द्वारा लिखित सौज
पूर्ण उत्तम पठनीय मामग्री से युक्त मासिक पत्र

“जिन वार्ता”

अवश्य पढ़िये और इसके ग्राहक बनिये । घर बैठे
जय जैनाचार्यों के प्रवचन भी आप ‘जिन वार्ता’ द्वारा
पढ़ सकेंगे । जैन शास्त्रों की बातें भी सरल सुगम भाषा
में आप इसमें पावेंगे ।

जैन साहित्य प्रचार के लिये यह अपने ढंग की
एक मात्र पत्रिका है ।

वार्षिक मूल्य ४) मात्र

पता—‘जिनवार्ता’ कार्यालय, जोधपुर ।